द्वाविंश खण्ड

श्यामपुकुर-बाटी में श्रीरामकृष्ण

प्रथम परिच्छेद

(श्री काली-पूजा के दिन श्यामपुकुर के घर में भक्तों के संग में)

श्रीरामकृष्ण श्यामपुकुर के घर में ऊपर के दक्षिण वाले कमरे में खड़े हैं। समय नौ का है। ठाकुर के परिधान में शुद्ध वस्त्र एवं मस्तक पर चन्दन का तिलक है।

मास्टर ठाकुर के आदेश से श्री सिद्धेश्वरी काली का प्रसाद लाए हैं; प्रसाद हाथ में लिए ठाकुर अति भक्तिभाव में खड़े होकर कुछ ग्रहण एवं कुछ मस्तक पर धारण कर रहे हैं। ग्रहण करते समय पादुका उतार दी हैं। मास्टर से कह रहे हैं, ''वेश प्रसाद।'' (सुन्दर प्रसाद है)।

आज शुक्रवार है; आश्विन अमावस्या, 6 नवम्बर, 1885 ईसवी— आज श्री काली की पूजा है।

ठाकुर ने मास्टर को ठनठने की श्री सिद्धेश्वरी काली माता को पुष्प, डाब, चीनी, सन्देश द्वारा आज प्रात: पूजा देने का आदेश किया था। मास्टर स्नान करके नग्नपदे प्रात: पूजा करके फिर नग्नपदे ही ठाकुर के पास प्रसाद लाए हैं।

ठाकुर का और भी एक आदेश है— ''रामप्रसाद के और कमलाकान्त के गानों की पुस्तक खरीद कर लाना।'' डॉक्टर सरकार को देनी होगी।

मास्टर कहते हैं, ''ये पुस्तकें लाया हूँ। रामप्रसाद और कमलाकान्त के गानों की पुस्तकें।'' श्रीरामकृष्ण ने कहा, ''ये गाने समस्त (डॉक्टर

के भीतर) घुसा देंगे।''

गान— मन कि तत्त्व कर ताँरे, येन उन्मत्त आँधार घरे।
से जे भावेर विषय, भाव व्यक्ति अभावे कि धरते पारे॥

[भावार्थ— हे मन, अँधेरे कमरे में पागल की भाँति तू क्या उनका विचार करता है? वे तो भाव का विषय हैं, भाव के बिना अभाव में क्या पकड़ सकता है?]

गान— के जाने काली केमन। षड़दर्शन ना पाय दरशन।

[कौन जाने काली कैसी हैं? छः दर्शनों को भी उनका दर्शन नहीं मिला है।]

गान— मन रे कृषि काज जानो ना।
एमन मानव जमिन रइलो पतित आबाद करले फलतो सोना।

[ओ मेरे मन रे, तू खेती का काम नहीं जानता। ऐसी मानव-जमीन पतित पड़ी रही, यदि आबाद (खेती) करता तो सोना पैदा हो जाता।]

गान— आय मन बेड़ाते जाबि।
काली कल्पतरु मूले रे मन चारि फल कुराये पाबि॥

[अरे मन! चलो, टहलने चलें। काली रूप कल्पतरु के मूल में वहाँ पर बटोरने पर चारों फल— धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष मिलेंगे।]

मास्टर— जी हाँ।

ठाकुर मास्टर के साथ कमरे में पायचारी कर रहे हैं— चटिजूता (स्लीपर) पाँवों में है। इतना असुख— सहास्य वदन।

श्रीरामकृष्ण— और वह गाना भी तो सुन्दर है— 'ए संसार धोंकार टाटी' आर 'ए संसार मजार कुटि। ओ भाई आनन्द बाजारे लुटि।'

['यह संसार धोखे की टट्टी है।' और 'यह संसार मजे की कुटीर है। आओ भाई, बाजार में आनन्द लूटें।']

मास्टर— जी हाँ।

ठाकुर हठात् चौंक रहे हैं। तुरन्त पादुका-त्याग करके स्थिर भाव में खड़े हो गए। एकदम समाधिस्थ। आज जगन्माता की पूजा है, जभी क्या मुहुर्मुहु चमकित (रोमाञ्चित) एवं समाधिस्थ हैं! अनेक क्षण उपरान्त दीर्घ नि:श्वास छोड़कर जैसे अति कष्ट से भाव संवरण किया।

द्वितीय परिच्छेद

(काली-पूजा के दिन भक्तों के संग में)

ठाकुर उसी ऊपर के कमरे में भक्तों के संग में बैठे हुए हैं; समय 10 का है। बिछौने के ऊपर तकिये पर ठेस देकर बैठे हुए हैं, भक्त चारों ओर बैठे हैं। राम, राखाल, निरंजन, कालीपद, मास्टर प्रभृति अनेक भक्त हैं। ठाकुर के भानजे हृदय मुखर्जी की बातें हो रही हैं।

श्रीरामकृष्ण *(राम आदि को)*— हृदे अभी भी जमीन, जमीन करता है। जब दक्षिणेश्वर में था तब कहा था, शाल दो, नहीं तो नालिश करूँगा।

''माँ ने उसको हटा दिया। लोगों के आने पर केवल रुपया, रुपया किया करता। वह यदि रहता तो ये समस्त लोग न आते। माँ ने हटा दिया।

''गो... ने ऐसे ही आरम्भ किया था। खुंत-खुंत (दोष निकालना) किया करता था। गाड़ी में मेरे साथ जाएगा तो देर कर देता। अन्य लड़कों के मेरे पास आने पर विरक्त हो जाता। उन्हें यदि मैं कलकत्ता देखने, मिलने जाता तो मुझसे कहता, ये क्या संसार छोड़कर आएँगे जो उन्हें देखने जा रहे हैं! लड़कों को जलपान देने से पहले डरकर उससे कहता, 'तू भी खा और उन्हें भी दे'। पता लग गया था, वह रहेगा नहीं।

''तब माँ से कहा था— माँ, उसको हृदे की भाँति बिलकुल ही न हटाना। उसके बाद सुना था, वह वृन्दावन जाएगा।

''गो... यदि ठहरता तो ये सब लड़के नहीं होते। वह वृन्दावन चला

गया, जभी ये सब छोकरे आने-जाने लगे।''

गो... *(विनीत भावे)*— जी, मेरे मन में वैसा नहीं था।

राम (दत्त)— तुम्हारे मन को वे जैसा समझेंगे वैसा क्या तुम समझोगे?

गो... चुप किए रहे।

श्रीरामकृष्ण *(गो... के प्रति)*— तू क्यों ऐसे करता है— मैं तुझको सन्तान से भी अधिक प्यार करता हूँ!

''तू चुप कर ना... अब तेरा वह भाव नहीं है।''

भक्तों के साथ कथावार्ता के पश्चात् उन लोगों के दूसरे कमरे में जाने पर ठाकुर ने गो... को बुलवा लिया और कहा, ''क्या तू मन में कुछ सोच रहा है?''

गो... जी नहीं।

ठाकुर ने मास्टर से कहा, ''आज काली-पूजा है, कुछ पूजा का आयोजन करना अच्छा है। उन्हें एक बार कह आओ। पूछो, सन का डण्ठल (पाकाटि) लाए हैं क्या?''

मास्टर ने बैठक में जाकर भक्तों को सब कुछ बता दिया। काली-पद और अन्य-अन्य भक्तगण पूजा का उद्योग करने लगे।

दो बजे के लगभग डॉक्टर ठाकुर को देखने के लिए आए। संग में अध्यापक नीलमणि हैं। ठाकुर के पास अनेक भक्त बैठे हैं— गिरीश, कालीपद, निरंजन, राखाल, खोका (मणीन्द्र), लाटु, मास्टर व कई और। ठाकुर सहास्यवदन, डॉक्टर के संग असुख की और औषध आदि की थोड़ी-सी बातें हो जाने पर कह रहे हैं, ''तुम्हारे लिए ये पुस्तकें आई हैं।''

डॉक्टर के हाथ में मास्टर ने वे दोनों पुस्तकें दे दीं।

डॉक्टर ने गाने सुनने चाहे। ठाकुर के आदेशक्रम से मास्टर और एक भक्त रामप्रसाद के गाने गा रहे हैं :

गान— मन करो कि तत्त्व ताँरे, जेने उन्मत आँधार घरे।

गान— के जाने काली केमन षड़्दर्शन ना पाय दरशन।

गान— मन रे कृषि काज जानो ना।

गान— आय मन बेड़ाते जाबि।

डॉक्टर गिरीश से कहते हैं, ''तुम्हारा वह गाना तो सुन्दर है— वीणा का गाना— बुद्ध चरित का।''

ठाकुर के इंगित से गिरीश और कालीपद दोनों जने मिलकर गाना सुना रहे हैं—

आमार एइ साधेर वीणे, यत्ने गाँथा तारेर हार।
ये यत्न जाने बाजाय वीणे उठे सुधा अनिवार॥
ताने माने बाँधले डुरि, शत धारे बय माधुरी।
बाजे ना आलगा तारे, टाने छिड़े कोमल तार॥

[भावार्थ— मेरी यह साध (बड़ी अभिलाषा) की वीणा है, यत्न से तारों का हार गूँथा गया है। जो यत्न से बजाता है, इस वीणा से निरन्तर सुधा निकलती रहती है। ताने-माने पर डोरी बाँध लेने पर फिर शत धाराओं में माधुरी बहने लगती है। कोमल तार को खींचकर तोड़ देने से या ढीले तारों से नहीं बजती।]

गान— जुड़ाइते चाइ, कोथाय जुड़ाई,
कोथा होते आसि कोथा भेसे जाइ।
फिरे फिरे आसि, कत काँदि हासि,
कोथा जाइ सदा भाबि गो ताइ॥
के खेलाय, आमि खेलि बा केनो?
जागिये घुमाइ कुहके जेनो,
ए केमन घोर होबे नाकि भोर,
अधीर-अधीर जेमति समीर अविराम गति नियत धाइ।
जानि ना केबा एसेछि कोथाय,
केनबा एसेछि, कोथा निये जाय,
जाइ भेसे भेसे कतो कतो देशे,
चारिदिके गोल उठे नाना रोल।

कतो आसे जाय, हासे काँदे गाय,
एइ आछे आर तखनि नाइ॥
कि काजे एसेछि कि काजे गेलो,
के जाने केमन कि खेला होलो।
प्रवाहेर वारि रहिते कि पारि,
जाइ-जाइ कोथा? कूल कि नाइ?
करो हे चेतन, के आछो चेतन,
कतो दिने आर भाँगिबे स्वपन?
जे आछो चेतन घुमाओ ना आर,
दारुण ए घोर निबिड़ आँधार।
करो तम नाश होओ हे प्रकाश,
तोमा बिने आर नाहिक उपाय
तव पदे ताइ शरण चाइ॥

[भावार्थ— शान्ति पाना चाहता हूँ, कहाँ शान्ति पाऊँ? कहाँ से आया हूँ, कहाँ पर तैरता चला जा रहा हूँ! लौट-लौट कर आ रहा हूँ, कितना रोता, हँसता हूँ, इसीलिए सदा सोचता हूँ, कहाँ जाऊँ भाई! कौन खिलाता है, मैं फिर खेलूँ ही क्यों? जागता हुआ सो रहा हूँ जैसे जादुगरी-सी है। यह कैसा अन्धेरा, भोर होगा भी या नहीं! अधीर-अधीर समीर की तरह अविराम गति से सदा दौड़ रहा हूँ। मुझे पता नहीं है कौन कहाँ पर आया है, क्यों आया है, कहाँ लिए जा रहा है, तैरता-तैरता कितने-कितने देशों में जा रहा हूँ, चारों ओर शोरगुल चीख-पुकार उठ रही है। कितने आ-जा रहे हैं, हँसते-गाते हैं, अभी हैं, और अभी नहीं। किस काम के लिए आया हूँ, किस काम से चला गया, कौन जाने कैसे क्या खेल हो गया! प्रवाह का जल क्या रह सकता है! जाऊँ तो जाऊँ कहाँ? कूल क्या नहीं है? हे चेतना, चेतन करो, कौन है चेतन, कितने दिनों में यह स्वप्न फिर टूटेगा? जो चेतन हो, वे और मत सोओ, यह घना अन्धकार बड़ा भयंकर है। तम नष्ट करो और प्रकाश करो हे (प्रभु)! तुम्हारे बिना और कोई उपाय नहीं है, तुम्हारे चरणों में इसीलिए शरण माँगता हूँ।]

गान— आमाय धरो निताइ।
आमार प्राण जेनो आज करे रे केमन॥
निताइ जीव के हरि नाम विलाते,
उठलो गो ढेउ प्रेम-नदी ते,
(एखन) सेइ तरंगे एखन आमि भासिया जाइ।

निताइ जे दु:ख आमार अन्तरे, दु:खेर कथा कइबो कारे,
जीवेर-दु:खे एखन आमि भासिया जाइ।

[भावार्थ— निताई, मुझे पकड़ो। मेरा प्राण आज न जाने कैसे-कैसे कर रहा है। निताई जीवों के लिए हरिनाम बाँटने के लिए उठा है जैसे प्रेम-नदी में तरंगें उठी हैं, (अब) उसी तरंग में अब मैं डूब रहा हूँ। निताई, जिस दु:ख की बात मेरे अन्तर में है, किससे कहूँ वे दु:ख की कथाएँ? जीव के दु:खों में अब मैं डूब रहा हूँ।]

गान— प्राणभरे आय हरि-हरि बोलि,
नेचे आय जगाइ माधाइ।

[आओ प्रेम में भरकर हरि-हरि बोलें, जगाइ-मधाई, आओ नाचें।]

गान— किशोरीर प्रेम निबि आय,
प्रेमेर जोयार बये जाय।
बहिछे रे प्रेम शतधारे,
जे जतो चाय ततो पाय॥
प्रेमेर किशोरी प्रेम बिलाय साध करि,
राधार प्रेमे बोलो रे हरि।
प्रेमे प्राण मत्त करे, प्रेम तरंगे प्राण नाचाय,
राधार प्रेमे हरि बोले,
आय, आय, आय, आय॥

[भावार्थ— आओ, किशोरी (राधा) का प्रेम लें, प्रेम की ज्वार बह रही है। प्रेम शत धाराओं में बह रहा है, जो जितना चाहता है, उतना ही पा रहा है। प्रेम की किशोरी स्वयं भरपूर इच्छा से प्रेम बाँट रही हैं, राधा के प्रेम में बोलो रे, हरि। प्रेम में प्राण मतवाले कर रही है, प्रेम-तरंग में प्राण को बचा रही है, राधा के प्रेम में आओ, आओ, आओ, आओ, बोलें हरि।]

गान सुनते-सुनते दो-तीन भक्तों को भाव हो गया— खोका का (मणीन्द्र का), लाटु का! लाटु निरंजन की बगल में बैठा हुआ था। गाना हो जाने के उपरान्त ठाकुर के साथ डॉक्टर फिर और बातें कर रहे हैं। गत कल प्रताप (मजुमदार) ने ठाकुर को 'नक्स वोमिका' औषध दी थी। डॉक्टर सुन कर नाराज (विरक्त) हुए।

डॉक्टर— मैं तो मरा नहीं हूँ, 'नक्स वोमिका' देना!

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— तुम्हारी मरे अविद्या!

डॉक्टर— मेरी कभी भी अविद्या नहीं रही।

डॉक्टर अविद्या का अर्थ नष्टा स्त्री समझे हैं।

श्रीरामकृष्ण *(सहास्य)*— नहीं जी! संन्यासी की अविद्या माँ मर जाती है और विवेक सन्तान होती है। अविद्या माँ के मर जाने पर अशौच होती है— जभी तो कहते हैं संन्यासी को छूते नहीं।

हरिवल्लभ आए हैं। ठाकुर कह रहे हैं, ''तुम्हें देखने पर आनन्द होता है।'' हरिवल्लभ अति विनीत हैं। चटाई से नीचे धरती के ऊपर बैठकर ठाकुर को पंखा झल रहे हैं। हरिवल्लभ कटक के बड़े वकील हैं।

निकट अध्यापक नीलमणि बैठे हैं। ठाकुर उनका मान रख रहे हैं और कह रहे हैं, ''आज मेरा बड़ा (खूब) दिन है।'' कुछ क्षण पश्चात् डॉक्टर और उनके मित्र नीलमणि ने विदा ली। हरिवल्लभ भी चलने लगे। चलते समय बोले, मैं फिर आऊँगा।

तृतीय परिच्छेद

[जगन्माता श्री काली-पूजा (ठाकुर में जगदम्बा-पूजा)]

शरत्काल अमावस्या, रात्रि सात। उसी ऊपर के कमरे में ही पूजा का समस्त आयोजन हुआ है। नानाविध पुष्प, चन्दन, बिल्वपत्र, जवा; पायस और नानाविध मिठाई ठाकुर के सम्मुख भक्तगण लाए हैं। ठाकुर बैठे हैं। भक्तगण चारों ओर घेर कर बैठे हैं। शरत्, शशी, राम, गिरीश, चुनिलाल, मास्टर, राखाल, निरंजन, छोटे नरेन, बिहारी प्रभृति बहुत-से भक्त हैं।

ठाकुर कह रहे हैं, ''धूना लाओ।'' कुछ क्षणों के बाद ठाकुर ने जगन्माता को समस्त निवेदन किया। मास्टर निकट बैठे हैं। मास्टर की ओर ताक कर कह रहे हैं, ''एकटु सबाइ ध्यान करो।'' (सभी थोड़ा

ध्यान करो)। सब भक्तगण थोड़ा ध्यान कर रहे हैं।

देखते-देखते गिरीश ने ठाकुर के पादपद्मों में माला दी। मास्टर ने भी गन्धपुष्प दिए। उसके पश्चात् ही राखाल ने। फिर राम आदि चरणों में फूल देने लगे।

निरंजन पाँव में फूल देकर 'ब्रह्ममयी, ब्रह्ममयी' कहकर भूमिष्ठ होकर पाँव में सिर रखकर प्रणाम कर रहे हैं। भक्तगण सब ही 'जय माँ! जय माँ!' ध्वनि कर रहे हैं।

देखते ही देखते ठाकुर श्रीरामकृष्ण समाधिस्थ हो गए। कैसा आश्चर्य है! भक्तगण अद्‌भुत रूपान्तर देख रहे हैं। ठाकुर का ज्योतिर्मय वदनमण्डल! दोनों हाथ वराभय! ठाकुर निस्पन्द, बाह्यशून्य! उत्तरास्य हुए बैठे हैं! साक्षात् जगन्माता क्या ठाकुर के भीतर आविर्भूता हो गई हैं!

सब ही अवाक् होकर इस अद्‌भुत वराभयदायिनी जगन्माता का मूर्ति-दर्शन कर रहे हैं।

अब भक्तगण स्तव कर रहे हैं। प्रत्येक जन गाना गाकर स्तव कर रहा है और सब मिलकर समस्वर में गा रहे हैं।

गिरीश स्तव कर रहे हैं :

के रे निबिड़ नील कादम्बिनी सुरसमाजे।
के रे रक्तोत्पल चरण युगल हर उरसे विराजे॥
के रे रजनीकर रखरे वास, दिनकर कतो पदे प्रकाश।
मृदु मृदु हास भास, घन घन घन गरजे॥

[भावार्थ— सुर-समाज में कौन है रे यह गाढ़ी नील कादम्बिनी! कौन हैं ये दोनों लाल कमल चरण शंकर की छाती पर रखे हुए विराजमान? कौन हैं ये जिनके नख में रजनीकर (चन्द्र) का वास है, और दिनकर (सूर्य) कितने चरणों में प्रकाशित है— मृदु-मृदु हँसी से प्रकाशमान होकर जो घन-घन-घन गरज रही हैं।]

फिर और गा रहे हैं :

दीनतारिणी, दुरितहारिणी, सत्त्वरजस्तम त्रिगुणधारिणी,
सृजन-पालन-निधनकारिणी, स्वगुणा निर्गुणा सर्वस्वरूपिणी।
त्वंहि काली तारा परमाकृति, त्वंहि मीन कूर्म वराह प्रभृति,
त्वंहि स्थल जल अनल अनिल, त्वंहि व्योम व्योमकेश-प्रसविनी।

सांख्य पातञ्जल मीमांसक न्याय, तन्न तन्न ज्ञाने ध्याने सदा ध्याय,
वैशेषिक वेदान्त भ्रमे होय भ्रान्त, तथापि अद्यापि जानिते पारेनि॥
निरुपाधि आदिअन्तरहित, करिते साधक जनार हित,
गणेशादि पञ्चरूपे कालवंच भवभयहरा त्रिकालवर्तिनी।
साकार साधके तुमि जे साकार, निराकार उपासके निराकार,
केहो केहो कय ब्रह्म ज्योर्तिमय, सेइ तुमि नगतनया जननी।
जे अवधि जार अभिसन्धि होय, से अवधि से परब्रह्म कय,
तत्परे तुरीय अनिर्वचनीय, सकलि मा तारा त्रिलोकव्यापिनी।

[भावार्थ— माँ, तुम दीनतारिणी, दुरित हारिणी (पाप नाशिनी), सत्त्वरजतम त्रिगुणधारिणी हो। सृजन-पालन-विनाशकारिणी, अपने-आप ही स्वगुणा, निर्गुणा, सर्वस्वरूपिणी हो। तुम ही काली, तारा, परमाप्रकृति हो, तुम ही मीन, कूर्म, वराह आदि हो, तुम ही स्थल, जल, अग्नि, वायु हो, तुम ही व्योम (आकाश)हो, हे व्योमकेश-प्रसविनी!

सांख्य, पातञ्जल, मीमांसक, न्याय पुंखानुपुंख (सूक्ष्म) ध्यान में सदा ध्याते हैं, वैशेषिक, वेदान्त भ्रम में भ्रान्त हो गए हैं, तथापि आज तक भी आपको जान नहीं सके हैं। साधक जानने के लिए आपको निरुपाधि, आदि-अन्त रहित कर रहे हैं। गणेश आदि पाँच रूपों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश, भवानी, गणेश) में कालवंच (काल को ठगने वाली), भवभयहरा, त्रिकालवर्तिनी (तीनों कालों में रहने वाली) हैं आप। साकार साधक के लिए आप साकार हैं, निराकार उपासक के पास निराकार। कोई-कोई कहता है ब्रह्म ज्योतिर्मय है, वही तुम हो हे नगतनया माँ। जिस समय जिसकी अभिसन्धि हो जाती है, उस समय से वह परब्रह्म कहलाता है। फिर है उसके पश्चात् तुरीय जो कहा नहीं जा सकता— त्रिलोक में व्याप्त सब कुछ ही माँ तारा।]

बिहारी स्तव कर रहे हैं :

मनेरि वासना श्यामा शवासना शोनो मा बोलि,
हृदय माझे उदय हइओ मा, जखन होबे अन्तर्जलि।
तखन आमि मने मने, तुलबो जबा बने बने,
मिशाइये भक्ति चन्दन मा, पदे दिबो पुष्पांजलि।

[भावार्थ— हे मेरी माँ, शव-आसना, सुनो मन की वासना कहता हूँ। हे माँ, जब मेरी अन्तर्जलि होगी तब उदय हो जाना। तब हृदय के बीच में, मैं मन ही मन, वन-वन में जवा-कुसुम चुनूँगा और भक्ति-चन्दन मिलाकर माँ, आपके चरणों में पुष्पांजलि दूँगा।]

मणि गा रहे हैं भक्तों के संग :

सकलि तोमारि इच्छा मा, इच्छामयी तारा तुमि,
तोमार कर्म तुमि करो मा, लोके बोले करि आमि।
पंके बद्ध करो करी पंगु रे लंघाओ गिरि,
कारे दाओ मा इन्द्रत्वपद कारे करो अधोगामी।
आमि यंत्र तुमि यंत्री, आमि घर तुमि घरणी,
आमि रथ तुमि रथी जेमन चालाओ तेमनि चलि।

[भावार्थ— माँ इच्छामयी, तुम तारा हो। सब तुम्हारी इच्छा है। तुम्हारा कर्म तुम स्वयं जगत में कर रही हो, किन्तु लोग कहते हैं कि मैं कर रहा हूँ। तुम हाथी को कीचड़ में बद्ध कर लेती हो और पंगु को पर्वत पार करा देती हो। किसी को इन्द्रत्वपद दे देती हो, किसी को निम्नपथगामी बना देती हो। मैं यन्त्र हूँ, तुम यन्त्री; मैं घर, तुम घरणी; मैं रथ, तुम रथी; जैसे चलाती हो वैसे ही चलता हूँ।]

गान— तोमारि करुणाय मा सकलि होइते पारे।
अलंघ्य पर्वत सम विघ्न बाधा जाय दूरे॥
तुमि मंगल निधान, करिछो मंगल विधान।
तबे केनो वृथा मरि फलाफल चिन्ता करे॥

[भावार्थ— तुम्हारी करुणा से हे माँ, सब पार हो रहे हैं। अलंघ्य पर्वत सम बिघ्न-बाधाएँ दूर हो जाती हैं। तुम मंगल की भण्डार हो, सर्वदा मंगल-विधान कर रही हो। फिर क्यों मैं फल-अफल की चिन्ता करके मरता हूँ!]

गान— गो आनन्दमयी होये मा आमाय निरानन्द करो ना।
[माँ, स्वयं आनन्दमयी होकर तुम मुझे निरानन्द न करो।]

गान— निबिड़ आँधारे मा तोर चमके ओ रूपराशि।
[घने अँधेरे में माँ, तेरी रूपराशि चमकती है।]

ठाकुर प्रकृतिस्थ हो गए। यह गाना गाने के लिए आदेश कर रहे हैं,

कखनो किरंगे थाको मा श्यामा सुधातरंगिणी।
[कब किस रंग में, माँ श्यामा सुधातरंगिनी, रहती हो।]

गाना समाप्त होने पर ठाकुर फिर और आदेश कर रहे हैं :

गान— शिव संगे सदा रंगे आनन्दे मगना।
सुधा पाने ढल ढल ढले किन्तु पड़े ना (मा)॥
[माँ, शिव के संग में आनन्द में, मगना हैं, सदा मजे में रहती हैं। अमृत-पान करती हुई गिरती-गिरती-सी लगती हैं किन्तु गिरती नहीं हैं।]

ठाकुर भक्तवृन्द के आनन्द के लिए तनिक-सा पायस मुख में दे रहे हैं। किन्तु एकदम भाव में विभोर, बाह्यशून्य (बेहोश) हो गए हैं!

कुछ क्षण पश्चात् सब भक्त ठाकुर को प्रणाम करके प्रसाद लेकर बैठक में चले गए और सबने मिलकर आनन्द मनाते-मनाते वहीं प्रसाद पाया। ठाकुर ने कहलवाया है— रात हो गई है, सुरेन्द्र के यहाँ आज श्री काली-पूजा होगी, तुम लोग निमन्त्रण पर जाओ।

भक्तगण आनन्द मनाते-मनाते सिमला स्ट्रीट में सुरेन्द्र के घर में पहुँचे। सुरेन्द्र ने अति यत्न, प्यार से उन लोगों को ऊपर की बैठक में ले जाकर बिठाया। घर में उत्सव है। सब ही गीत, वाद्य इत्यादि लेकर आनन्द कर रहे हैं।

सुरेन्द्र के घर में प्रसाद पाकर घर लौटते-लौटते भक्तों को प्राय: दो प्रहर से अधिक रात हो गई थी।